भूदान, सर्वोदय और गरीबी

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ — सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई — अंक ४६

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० १४-जनवरी, १९५६

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

गुजरातकी नअी जिम्मेदारी

भारतमें गुजराती-भाषी प्रदेशका नया अलग राज्य बननेकी संभावना बढ़ती देखकर अुत्तर गुजरातके अेक माध्यमिक शिक्षकने नीचेका पत्र लिखकर अेक सही विचार पेश किया है। वे लिखते हैं:

"जैसे जैसे महागुजरातका अलग राज्य बननेकी संभावना बढ़ती जाती है, वैसे वैसे अनेक लोगोंके हृदय प्रसन्न होते जाते हैं। यह अत्यन्त स्वाभाविक है। लेकिन गहरा विचार करने पर महागुजरात बननेका आनन्द होनेके बदले हृदयकी अिस प्रसन्नताके पीछे स्वार्थ ही अधिक दिखाअी देता है। अुद्योगपति अधिक मुनाफेकी आशासे खुश होते होंगे। धारासभाके अनेक सदस्य मंत्री बननेकी आशासे प्रसन्न होते होंगे। कितने ही सरकारी अधिकारी अूंचे पदों पर पहुंचनेके स्वप्न देखकर खुश होते होंगे। परंतु अैसे लोग थोड़े ही होंगे जिनके हृदयमें यह अुदात्त भावना हो कि महागुजरातका प्रत्येक नागरिक सुखी हो, समृद्ध बने, और मुफ्त शिक्षाकी सुविधा प्राप्त कर सके।

"सच्चे अर्थमें महागुजरातकी स्थापना करनी हो, सर्वोदयके लिअे अुसकी स्थापना करनी हो, तो समस्त महागुजरातका सारा राजकाज गुजरातीमें ही होना चाहिये। महागुजरातके राजकाजके लिअे अंग्रेजी या हिन्दी नहीं चल सकती। कुछ लोग अैसे निर्णयको पागलपन भरा कहेंगे, कुछ अुसे संकुचितता कहेंगे, तीसरे अुसे और भी अनेक अुपनाम देंगे। लेकिन मुझे विश्वास है कि आप जैसे लोग अिस बातको सही दृष्टिसे समझकर अुचित दिशामें कदम अुठायेंगे।

"जैसा कि मैंने अूपर बताया, महागुजरात बनते ही सरकारी नौकर मुख्य अधिकारी बननेके लिअे जमीन-आसमान अेक करने लगेंगे। सामान्य अिंजीनियर मुख्य अिंजीनियर बनना चाहेगा। पुलिसका सामान्य अिन्स्पेक्टर या जमादार डी० अेस० पी० बननेके सपने देखेगा। परंतु जिस अुद्देश्यके लिअे महागुजरातकी रचना हो रही है या होनेवाली है, अुस अुद्देश्यको बहुतसे लोग भूल जायंगे। लेकिन मैं मानता हूं कि महागुजरातके बनते ही अुसके प्रत्येक नागरिकके मनमें यह भावना जाग्रत होने पर ही वह टिक सकेगा कि महागुजरात हमारा है, हम सबके भलेके लिअे है और हम सब अुसे अुन्नत बनानेके लिअे परिश्रम करेंगे। अैसी भावना होने पर ही सच्चे कर्तव्यका पालन संभव होगा। परंतु अिसे संभव बनानेके लिअे महागुजरातका सारा राजकाज (आन्तरिक)— कोअी भी सरकारी विभाग अिसका अपवाद न रहे— गुजराती भाषामें ही चलना चाहिये। शब्द न हों, पुस्तकें न हों तो भी अिस कठिनाअीमें से रास्ता निकालना होगा; अिसमें हारनेसे काम नहीं चलेगा।"

आरंभमें अेक बात स्पष्ट कर दूं कि गुजरातका जो नया राज्य बने अुसके लिअे 'महागुजरात' शब्दका अुपयोग करना जरूरी नहीं है। 'गुजरात' शब्द अुसके लिअे काफी अर्थवाही और अुत्तम है। 'महा', 'विशाल', 'बृहत्' आदि शब्दोंने लोगोंके मनमें जो भाव जगाये हैं, अुन्हें देखते हुअे भी अिन विशेषणोंको छोड़ देना ही ठीक होगा। और हमारे मनका भाव बतानेके लिअे भी अैसे विशेषणोंकी जरूरत नहीं है। गुजराती भाषा बोलनेवाली जनताका प्रदेश गुजरात है, यह सादी समझ अुत्तम और सर्वथा अुचित है। अस्तु।

पाठक जानते हैं कि बम्बअीके द्विभाषी अेकराज्यको मैं पसन्द नहीं करता। अिसलिअे अुसके स्थान पर अगर हमारा अलग राज्य बना तो अुसमें मैं भगवानका हाथ ही समझूंगा। जिस प्रकार यह विचार अूपर आया, वह कांड न हुआ होता और पहलेसे ही यह चीज सुझाअी जाती तो ज्यादा अच्छा होता। परंतु गअी-गुजरीको भूल जाना ही बेहतर होगा।

पत्रलेखकने अपने पत्रमें सावधानी रखकर यह बात कही है कि गुजरातका अलग राज्य बननेकी संभावना बढ़ रही है। अभी तो मिट्टीका पिंडा चाक पर ही है और मनचाहा आकार बनकर अुस परसे निकलनेवाला होगा तो निकलेगा। फिर भी अुसके चिन्ह देखकर अुन्होंने जो चर्चा की है अुसे बिलकुल निराधार नहीं कहा जा सकता।

बम्बअीके द्विभाषी राज्यके विचारके बारेमें अेक बात गुजरातसे कहने जैसी है। मेरे अनेक महाराष्ट्री मित्रोंने मेरे प्रति पूर्ण सद्भाव रखकर गुजरातके निर्णयके विषयमें अेक प्रश्न मुझसे पूछा है। वह प्रश्न अिस प्रकार है: द्विभाषी राज्य-रचनाका विचार गुजरातने पसन्द किया; अुसमें सारे गुजराती-भाषी लोगोंका शामिल होना संभव हुआ यह अच्छी बात है; अुसी तरह विचार करके समस्त मराठी-भाषी जनताका समावेश करनेवाला महाराष्ट्र रचकर अैसे महाराष्ट्रका और गुजरातका अेक द्विभाषी राज्य बनानेकी महाराष्ट्रकी सूचना आपने अस्वीकार क्यों की?

पाठक जानते हैं कि महाराष्ट्र प्रदेश कांग्रेस समितिने और संयुक्त महाराष्ट्र परिषद्ने भी यह चीज अपने प्रस्ताव द्वारा पेश की थी। अुसे गुजरातने अस्वीकार किया तबसे तीन अलग घटक रचनेकी बातका नया प्रकरण शुरू हुआ और राज्य-पुनर्रचना कमीशनकी रिपोर्टका द्विभाषी अेकराज्यका सुझाव पीछे पड़ने लगा।

महाराष्ट्रके मित्र अिस प्रश्नको समझ सकते हैं। अिसमें अगर अुन्हें गुजरातके हेतुओं या नीयतके बारेमें शंका हो तो मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहूंगा कि वह ठीक नहीं है।

www.vinoba.in

गुजरातके ना कहनेका कारण साफ है। महाराष्ट्रको अुसे मानकर गुजरात पर विश्वास रखना चाहिये। महाराष्ट्रने जो बात कही थी वह **स्थायी** नहीं थी; अुसने यह कहा था कि पांच वर्षके बाद गुजरात चाहे तो अलग राज्य बन सकता है। मतलब यह कि महाराष्ट्रकी सूचनाका आधार तो बम्बअी-सहित संयुक्त महाराष्ट्रके अलग भाषावार राज्यकी मान्यता पर था। और अिसमें मैं कोअी दोष नहीं मानता। परंतु विचार तो **स्थायी** रचनाके लिअे करनेका था। यह चीज महाराष्ट्रके प्रस्तावमें नहीं थी, अिसलिअे स्पष्ट है कि अुसकी सूचना अप्रासंगिक थी।

मेरे अिस अुत्तरसे पूछनेवाले मित्रोंको लगता था कि यह अच्छी तरह समझमें आने लायक बात है। अुन मित्रोंके साथ हुअी अधिक चर्चामें यहां अुतरना जरूरी नहीं है। अेक दो बातें जो मैं अपनी ओरसे अुन्हें कहता था वे यहां देने जैसी हैं।

जिन लोगोंको भाषावार अेकराज्यकी मान्यतामें श्रद्धा हो, अुन्हें द्विभाषी अेकराज्यका प्रस्ताव नहीं रखना चाहिये।

अिसके सिवा, संयुक्त महाराष्ट्रकी सिद्धिके लिअे अहिंसाकी नीतिमें विश्वास रखनेवाली कांग्रेस तथा श्री शंकरराव देव जैसे सर्वोदय-सेवक हिंसाकी नीतिमें दोष न माननेवाले — अथवा कहिये कि साध्य और साधनकी अेकरूपताके सिद्धान्तमें विश्वास न रखनेवाले साम्यवादी और समाजवादी दलोंके साथ मिल गये, अिसे क्या कहा जायगा? आज तो अब यह दिखाअी देने लगा है कि अिसके बुरे फल बम्बअी शहर और महाराष्ट्र कांग्रेसको भोगने पड़ेंगे। कांग्रेसको अिसमें से निकलनेके लिअे जाग्रत प्रयत्न करना होगा।

अब पत्रलेखककी मुख्य बात पर आता हूं। अुन्होंने अपने पत्रमें दो-तीन बातें कही हैं: (१) गुजरातका अलग राज्य बने तब सब लोगोंको अुसके समग्र हितका ध्यान रखकर चलना चाहिये। अपने-अपने क्षुद्र संकुचित हितोंमें नहीं बह जाना चाहिये। (२) नये राज्यमें करने लायक काम ये हैं — गरीबोंको सुखी बनाना, प्रजाको अच्छा मुफ्त शिक्षण देना तथा देशकी समृद्धि बढ़ाना। (३) और मुख्य बात तो वे यह कहना चाहते हैं कि गुजरात प्रदेशका राजकाज गुजराती भाषामें ही चलना चाहिये। ये तीनों बातें बिलकुल सही, बहुत महत्त्वपूर्ण और अत्यन्त आवश्यक हैं।

अभी तो नअी राज्य-पुनर्रचनाके बारेमें विचार भी पूरा नहीं हुआ है, वहीं हमारे नेताओंके मनमें यह डर घुसने लगा है कि भाषाके कारण राज्य-प्रदेश अलग हों और अुनका सारा काम-काज अपनी-अपनी भाषामें चले यह तो अच्छी बात है; अिससे आम जनताकी शैक्षणिक और सांस्कृतिक अुन्नति होगी। लेकिन अगर अपने राज्यकी आर्थिक अुन्नतिके लिअे हमारे मन संकुचित बन जायं, दिलमें दीवालें खड़ी हो जायं और पड़ोसी राज्योंके साथ हम झगड़ेमें फंस जायं, अथवा हम यह भूल जायं कि भारत हमारा अेक देश है और अुसकी समृद्धि व खुशहालीमें सबकी समृद्धि और खुशहाली है, तब तो अंग्रेजी भाषाका बकरा निकालने जाते अूंटके पैठने जैसी बात हो जायगी।

अैसा डर केवल राज्य राज्यके बीच ही नहीं, प्रदेश-राज्यके भीतर जिले जिलेके बीच, जातियोंके बीच, तथा वर्गोंके बीच भी खड़ा है। अिसलिअे यह सवाल केवल आन्तर-प्रादेशिक ही नहीं, राज्यके भीतरका भी है। मतलब यह कि हमें अपनी अेक-प्रजाकी भावनाको हमेशा जाग्रत रखकर सब जगह काम करना होगा।

यह डर बेबुनियाद नहीं है। लेकिन अिसका अुपाय सारे राज्योंके चार-पांच झोन बनानेसे नहीं होगा। न प्रदेश-भाषाके बदले हिन्दीमें प्रदेश-राज्योंका शिक्षण, राजकाज, अदालतें वगैरा चलाना अिसका अुपाय है। दिलकी सफाअीके सवाल दिलसे ही हल हो सकते हैं। अपने सारे व्यवहारोंमें भारतकी अेक-प्रजाकी भावनाका खयाल रखकर हमें अपने सारे कामोंका विचार करने लगना चाहिये; अिसके लिअे अगर झोन जैसी व्यवस्था जरूरी हो तो वह जरूर की जा सकती है। अुसी तरह अेक प्रदेशके भीतर भी अिसी अुदारतासे सारा कामकाज होना चाहिये।

पत्रलेखकने अिस बात पर बहुत जोर दिया है कि प्रदेशका राजकाज प्रदेश-भाषामें ही चलना चाहिये, और वह बिलकुल ठीक है। मैं तो मानता हूं कि प्रदेशका अलग राज्य रचनेका यही मूल प्रयोजन हो सकता है। लोगोंकी भाषामें कामकाज करनेसे अुनकी शक्तिका हम पूरा पूरा विकास कर सकेंगे; अितना ही नहीं अुस शक्तिको सबकी सेवामें लगानेका मार्ग भी अुसीमें से निकल सकेगा। अिसका अिनकार करनेका मतलब होगा आम जनताको स्वराज्यका फल चखनेसे वंचित रखना। भारतमें आज जब लोकराज्यकी स्थापना हो रही है, तब लोगोंके अिस हकसे कौन अिनकार कर सकता है? करोड़ों लोगोंको अगर भाषावार राज्यमें रस है तो अिसीलिअे है। परंतु पढ़े-लिखे या आगे बढ़े हुअे लोग अिसमें अन्य लाभ देखेंगे तो वे जनताका द्रोह करेंगे। स्वराज्यमें अैसा द्रोह लम्बे समय तक चल नहीं सकता। अिसलिअे अिन वर्गोंको सत्ता और स्वार्थलाभकी होड़में नहीं पड़ना चाहिये। लोगोंको अपनी भाषामें सारी बातें जानने-समझनेका मौका मिलेगा तो अुसके द्वारा अुनकी लोकशक्तिका विकास होगा और बादमें वह शक्ति अपने-आप हमारे लोकतांत्रिक संविधानके जरिये प्रकट होती जायगी। यह आशा रखी जा सकती है कि सर्वोदयको भूलकर वर्गोदय या स्वार्थपूर्तिमें लगे हुअे दल भी अुस लोकशक्तिसे दबते और सुधरते जायंगे। हमें यह चीज सिद्ध कर दिखानी होगी कि भाषावार राज्य-व्यवस्थाके भीतर रहे अिस सत्यको प्रकट करके गांधीजीने गुजरातका निर्माण किया है। गुजरातका अलग राज्य न बने तो भी मिश्र राज्यको अैसी व्यवस्था करनी चाहिये जिससे गुजरातका काम अपनी भाषाके अुपयोगके जरिये प्रगति कर सके।

अन्तमें, अेक बात याद रखनी चाहिये और अुसका संबंध देशकी आन्तर-भाषा हिन्दीसे है। अूपर प्रदेश-भाषाके बारेमें जो कुछ कहा गया है वह अिस बातके बिना अधूरा है। प्रत्येक भाषावार राज्य अगर भारतकी अेकतामें विश्वास रखता है तो अुसकी कसौटी अिसी बातमें है कि वह राज्य अपने शिक्षणमें हिन्दीको तुरन्त सम्मानपूर्ण और अनिवार्य स्थान दे; तथा अैसे कदम अुठाये जिससे अुसकी प्रजा हिन्दी भाषा सीखने लगे। तभी सरकारी नौकरों, न्यायाधीशों, प्राध्यापकों वगैराका अेक प्रदेशसे दूसरे प्रदेशमें जाना-आना संभव होगा। भाषावार राज्यके पीछे अन्य भाषा-भाषी लोगोंके लिअे दरवाजे बन्द करनेका अिरादा बिलकुल नहीं है, नहीं हो सकता। भारतके संविधानने ही अिसका निषेध किया है। यह ध्येय सिद्ध करनेके लिअे भारतके पूरे शिक्षणमें दूसरी भाषाके रूपमें हिन्दीके शिक्षणको अनिवार्य बनाना जरूरी है। दुःखकी बात है कि राज्य-सरकारें अिस बारेमें शिथिल हैं, आनाकानी करती हैं या लापरवाह हैं; यह चीज भारतकी अेकता पैदा करनेमें रुकावट डालती है। अंग्रेजीकी गलत और दोषपूर्ण नीति आज भी चल रही है। अिससे दोनों तरहसे नुकसान होता है — अंग्रेजी भी अच्छी तरह नहीं सीखी जाती और हिन्दीको शिक्षणमें जो स्थान मिलना चाहिये वह नहीं मिल सकता। अंग्रेजी भाषाका ज्ञान आवश्यक है। अुसे संतोषप्रद ढंगसे देना हो तो वह भी अूपर बताअी भाषानीति निश्चित करनेसे ही संभव होगा। गुजरातको अुस रास्ते चलकर देशमें अिस नीतिकी सत्यता सिद्ध कर दिखानी चाहिये। यह अुसकी नअी जिम्मेदारी है।

३१-१२-'५५ **मगनभाअी देसाअी**

(गुजरातीसे)

www.vinoba.in

रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा अेकता

जब तक भारतमें सैकड़ों अलग अलग और परस्पर विरोधी समस्यायें हैं, तब तक अिस अभागे देशमें अेकता कायम नहीं हो सकती। जब केवल अेक ही प्रमुख समस्या रहेगी, जिसके बारेमें हमें लगे कि अिसे हल करना चाहिये वर्ना हमारा नाश हो जायगा, तभी हम अेक होंगे। अैसी सबसे बड़ी समस्या स्वराज्य मिलनेके पहले राष्ट्रीय स्वतंत्रता प्राप्त करनेकी थी। आज भी हमारे सामने अैसी सबसे बड़ी समस्या है, अगर हम अुसे समझें। वह हमारी आम जनताकी निरक्षरता और गरीबीकी समस्या है। हमारे लोकतंत्रका और हमारी समान संस्कृतिका भाग्य भी गरीबी और अज्ञानकी अिन दो समस्याओंके शीघ्र हल पर निर्भर करता है। गांधीजीने स्वतंत्रता प्राप्तिसे पहले भी अिसे समझ लिया था। अुनके रचनात्मक कार्यक्रम अिन दो बुराअियोंका सामना करनेके लिअे ही बनाये गये थे। वे अक्सर कहा करते थे कि आम जनताका अेक ही सबसे बड़ा हित है; और अैसे किसी भी हितको, जिसका अिस मुख्य हितसे विरोध हो, अपना स्थान अुसे दे देना चाहिये। अगर आज शिक्षितों और राजनीतिज्ञोंके जीवनमें आम जनताके अिस हितको सर्वोच्च स्थान दे दिया जाय, तो किसी तरहके साम्प्रदायिक, जातीय या प्रान्तीय भेद नहीं रह जायंगे। तब परस्पर विरोधी हित नहीं रहेंगे, बल्कि अेक ही सर्वोच्च हित —अेक अखिल भारतीय हित— रह जायगा, जिसकी सिद्धिमें हम सबको लगना चाहिये। भगवान करे अिस सर्वोच्च हितको समझनेकी शक्ति और बुद्धिमत्ता हममें आवे और हम अपने राष्ट्रके कल्याण और गौरवके लिअे काम करें।*

(अंग्रेजीसे) **जे० बी० कृपालानी**

क्या हम पर अर्थशास्त्री राज करते हैं?

अिसी अंकमें अन्यत्र दिये गये 'रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा अेकता' नामक लेखकी ओर मैं पाठकोंका ध्यान खींचता हूं। श्री कृपालानीने अुसमें जो बात कही है वह बिलकुल सच है। दुर्भाग्यसे हमारे नेता अैतिहासिक रचनात्मक कार्यक्रमके बारेमें अेकमत नहीं हैं। अुदाहरणके लिअे, अुसके सबसे प्रमुख अंग शराबबंदीके बारेमें, जो हमारी प्रतिज्ञाके अनुसार स्वराज्य सरकारका सबसे पहला कार्य होना चाहिये था, योजना-कमीशनका रुख देखिये। विकास-योजनाओंके लिअे शराबके पैसेका लोभ किया जाता है, जो बहुत ही लंबी-चौड़ी हैं, जिन्हें बिना कारण केन्द्रित रूप दे दिया जाता है और जो बड़ी दीखनेवाली बनाअी जाती हैं। वास्तवमें बड़ी और आश्चर्यजनक चीजें वे हैं, जो हमारी आम जनताके करोड़ों लोगोंको अुनके प्रतिदिनके आर्थिक और सामाजिक जीवनमें छूती हैं, अुनकी स्थितिको सुधारती हैं और अिस तरह मनुष्योंके दिल और दिमागको जाग्रत करती हैं। ये चीजें बेशक शराबबंदी, खादी, ग्रामोद्योग और बुनियादी तालीम हैं। लेकिन हम क्या देखते हैं? हमारे राष्ट्रपतिने स्पष्ट शब्दोंमें शिक्षाकी मौजूदा स्थिति पर अपनी राय प्रकट की है। शराबबन्दीसे गरीब लोगोंके करोड़ों रुपये बचेंगे। परंतु हमारे देशके वर्ग गरीबोंके हाथमें ये करोड़ों रुपये नहीं आने देंगे, क्योंकि अुन्हें अपने केन्द्रीय अुद्योगोंके लिअे पैसा चाहिये। मैं आशा करता हूं कि भारतमें समाजवादी समाज-व्यवस्था कायम करनेका वचन देनेवाली हमारी सरकार अिस बातको महसूस करेगी कि योजनाकारोंकी प्रथम पंचवर्षीय योजनाके समयसे ही रही शराबबन्दी-विरोधी वृत्तिको मंत्रिमण्डल द्वारा शराबबन्दी कमेटीकी सिफारिशोंको रद्द नहीं करने देना चाहिये। क्या कांग्रेस अध्यक्ष अिस तरफ ध्यान देंगे? वे अुस वचनके संरक्षक हैं, जो कांग्रेसने देशकी जनताका विदेशी शासनके खिलाफ लड़नेके लिअे आवाहन करते समय अुसे दिया था। क्या अैसी योजनाको राष्ट्रीय कहा जा सकता है, जो कल्याणकारी प्रवृत्तिके नाते शराबबन्दीको सबसे पहले हाथमें लेनेका अिनकार करनेकी हिम्मत दिखा सकती है?

गांधीजीने कहा था कि शराबबन्दी सफल होगी, बशर्ते समस्याके बुनियादी सत्यको स्पष्ट रूपसे समझ लिया जाय— यानी शराबकी आयको लोभकी नजरसे मत देखो; पहले अुसे छोड़नेका निश्चय करो। और हमने अैसा निश्चय किया भी था। ब्रिटिश सरकारने अुस समय हम पर यह अिलजाम लगाया था कि हम शराबबंदीके बारेमें प्रामाणिक नहीं थे, केवल आर्थिक कठिनाअी खड़ी करके ब्रिटिश शासकोंको तंग ही करना चाहते थे, और यह कि हमारा यह कदम मानव-कल्याणकी भावनासे प्रेरित नहीं बल्कि राजनीतिक था। क्या हम अुस अिलजामको सच्चा साबित कर दिखाने पर तुले हुअे हैं? शराबबन्दी कोअी आर्थिक समस्या खड़ी नहीं करती। राष्ट्र द्वारा बहुत पहले यह निर्णय कर लिया गया था। हमारी सरकार तहेदिलसे यह चाहती है कि भारतमें लोगोंका राज्य— गरीबोंके लिअे राज्य कायम हो। आशा है हम पर अर्थशास्त्री राज नहीं करते, बल्कि वे लोग करते हैं जिन्होंने दरिद्रनारायणकी सेवामें अपने-आपको समर्पित करनेकी घोषणा की थी।

६-१-'५६ **मगनभाई देसाई**

(अंग्रेजीसे)

अूनका अुद्योग

कपड़ेके अुपयोगमें सूती कपड़ेसे दूसरे नंबर पर रेशमी और गरम कपड़ा आता है। हमारे देशकी समशीतोष्ण आबहवाके कारण गरम कपड़ेका अुपयोग यहां कम होता है। फिर भी जाड़ोंमें किसी न किसी रूपमें प्राचीन कालसे गरम कपड़ेका अुपयोग होता आया है। अिसलिअे अुसका अुद्योग बहुत पुराना है। यह धंधा गांवोंमें बहुत अच्छी तरह चलता था। वहां कंबल, सतरंजी, दुशाले वगैरा गरम माल बनता था। अुसमें से कुछ माल बाहर भी भेजा जाता था। परंतु मिलके गरम कपड़े और विदेशी कपड़ेकी होड़के कारण दूसरे गृह-अुद्योगोंकी तरह गरम कपड़ेके अिस अुद्योगका भी ह्रास होता गया है और अुसे फिरसे जीवन-दान देना जरूरी हो गया है। अिस संबंधमें ग्रामोद्योग बोर्डने पंचवर्षीय योजनाके लिअे नीचेके सुझाव पेश किये हैं:

(१) हमारा अून मिलावटवाला, हलकी जातका और छोटे रेशेका होता है और अुसे कातने, पींजने और बुननेमें कार्यक्षम औजारोंका अुपयोग नहीं किया जाता। हमारे यहां हर भेड़के पीछे अून भी कम अुतरता है। अिस स्थितिमें सुधार करनेके लिअे शोध की जाय और अुत्पादकोंको मदद दी जाय।

(२) नौ अुत्पत्ति-केन्द्र, दो रंगाअी केन्द्र और पांच तालीम केन्द्र खोले जायं और अुनके जरिये अुत्पादनमें सुधार करनेकी व्यवस्था की जाय।

(३) अिस तरह पैदा होनेवाले मालको सरकारी कामोंके लिअे खरीदनेमें तरजीह दी जाय और अुसकी बिक्री पर तीन आने रुपया राहत— मदद दी जाय।

(४) अिस प्रकारके मालकी मिलों द्वारा होनेवाली पैदावार पर तथा अुसके आयात पर नियंत्रण लगाया जाय।

अैसा करनेसे गरम कपड़ेका भाव आज जो रु० ८-१३-० वार है, वह घट कर रु० ६-११-० हो जायगा और ३५,२५० अधिक लोगोंको काम मिलेगा। आज अिस धंधेमें लगभग ३ से ४ लाख लोगोंको कुछ समयकी या पूरे समयकी रोजी मिलती है। अुन्हें भी अिस योजनासे निश्चित काम मिलेगा और अधिक मजदूरी मिलेगी। अूपर बताये खर्चमें यह कोअी छोटा-मोटा लाभ नहीं माना जायगा।

(गुजरातीसे) **वि०**

* ३१ दिसम्बर, १९५५ के 'विजिल' से।

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

१४ जनवरी १९५६

भूदान, सर्वोदय और गरीबी

बम्बअीके गवर्नर श्री मेहताबने हाल ही अेक बार फिर अुड़ीसामें भूदान-आन्दोलनके बारेमें अपनी यह मान्यता प्रकट की कि भूदानके द्वारा गरीबीका ही बंटवारा होगा, देशकी सम्पत्ति नहीं बढ़ेगी। अिस समय अुन्होंने अेक और बात कही कि यह चीज अुन्हें बहुत पहले ही कहनी चाहिये थी। मतलब यह कि भूदानसे गरीबीका बंटवारा होनेकी बात अुन्हें अितनी सत्य मालूम होती है।

श्री मेहताब जैसे देशभक्त लोकसेवक अितने आग्रहसे यह बात कहें, तो अुस पर विचार करना जरूरी हो जाता है। लेकिन बड़ी कठिनाअी तो यह है कि वे निश्चित रूपमें क्या कहना चाहते हैं, यह अुनके शब्दोंसे समझमें नहीं आता। केवल 'गरीबीका ही बंटवारा होगा' अैसा अनिश्चित शब्दप्रयोग करके अुन्हें रुक नहीं जाना चाहिये।

क्या वे यह कहना चाहते हैं कि भूदान और ज्यादा गरीबी पैदा करेगा? अैसा तो शायद ही कोअी कह सकेगा। मनुष्य अपनी जायदादमें से दूसरेको दान दे, यह तो सोलह आने अच्छी बात है। अिसमें आपत्ति क्या हो सकती है? अैसी ही प्रवृत्तिके लिअे तो गीताकारने कहा है:

'स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।'

जितना करें अुतना पुण्य ही है; अुससे समाज भारी नुकसानसे बच जाता है। अिसलिअे श्री मेहताब वास्तवमें क्या कहना चाहते हैं, यह हमारी समझमें नहीं आता।

अुन्होंने अपना यह विचार अुड़ीसामें ही फिर जाहिर किया है। अुस प्रदेशमें भूदानने अपना नया रूप प्रकट किया है। वहां अिस समय भूदानका नया प्रयोग आरंभ हुआ है। लगभग ८०० गांव भूदानमें मिले हैं। देशकी यह अपूर्व घटना कही जायगी। अब अुन गांवोंमें नवरचनाका काम करनेके लिअे ग्रामसेवक जमने लगे हैं। और गांवोंमें अम्बर चरखेका प्रयोग शुरू किया गया है। अुसके आसपास ग्रामसुधारकी दूसरी अनेक प्रकारकी प्रवृत्तियां गूंथी जायंगी। जैसा कि विजयवाड़ामें श्री विनोबाने पत्र-प्रतिनिधियोंसे बातचीत करते हुअे २० दिसम्बरको कहा, दानमें मिले हुअे अिन गांवोंमें ग्रामराज्य स्थापित करनेकी अुनकी योजना आजमाअी जायगी। "गांवकी जमीन परिवारके आदमियोंकी संख्या देखकर बांटी जायगी। २१ वर्ष या अिससे बड़ी अुम्रके लोग १०–१५ सदस्योंकी अेक ग्राम-समिति चुनेंगे। यह समिति लोगोंकी जरूरतोंकी जांच करेगी — अुदाहरणके लिअे, निरक्षरता दूर करना, ग्रामोद्योगोंके मालकी बिक्रीके लिअे सुविधायें पैदा करना, सिंचाअीकी व्यवस्था करना, ग्रामोद्योगोंको प्रोत्साहन देना वगैरा। अैसे कदम अुठाये जायंगे जिनसे सारी सुविधायें (अुच्च शिक्षा तककी) गांवोंमें मिल सकें और गांव स्वावलम्बी बनें।" (पी० टी० आअी० के ता० २१–१२–'५५ के अेक समाचारसे)

संभव है श्री मेहताबको या अुड़ीसाके राजनीतिक क्षेत्रके कुछ वर्गों अथवा दूसरे वर्गोंको ग्रामराज्यकी स्थापनाका यह नया विचार या आदर्श पसन्द न आता हो, अथवा अुन्हें अैसा होना संभव न लगता हो, या फिर वे दूसरा कुछ मानते हों। जो भी हो वह स्पष्ट शब्दोंमें अिस वर्गके लोगोंको बता देना चाहिये। यही ज्यादा अुचित होगा।

और ग्राम-स्वराज्यके अिस विचारको नया भी कैसे कहा जाय? देशकी आजादीकी लड़ाअीमें भाग लेनेवाले सारे पुराने सेवकोंको मालूम है कि १९३४–३५ के बाद गांधीजीने ग्रामोद्योगों द्वारा ग्रामसेवाकी बात शुरू की, अुसके बादके वर्षोंमें अुन्होंने यह दर्शन हमारे सामने रखा था कि हर गांवमें या दस मीलके घेरेमें आये हुअे ग्राम-समूहमें अेक-अेक ग्रामसेवक रहे; वे सब रचनात्मक कार्यों द्वारा गांवोंकी समग्र सेवा करें; और अिसके फलस्वरूप स्वावलम्बी और समझदार बने हुअे गांवोंकी बुनियाद पर देशका अेक अखंड, मजबूत, समृद्ध और शांतिपरायण राज्य रचा जाय। अिस दर्शनको कार्यका रूप देना अभी बाकी है, यह हम भूल नहीं सकते।

सरकारने 'कम्युनिटी प्रोजेक्ट' वगैराके नाम पर ग्राम-विकासकी योजनाओं पर अमल करनेके लिअे जो ग्रामसेवक रखना शुरू किया है, अुसके पीछे भी जड़में जायें तो कौनसा विचार है? क्या अुससे गरीबीका बंटवारा होता है?

भूदानके निमित्तसे श्री विनोबा अिसी बातको ताजा कर रहे हैं। अुसमें अुन्होंने जमीनके प्रश्नको शामिल कर लिया है। परन्तु अुससे ग्रामस्वराज्यकी कल्पनामें कोअी परिवर्तन नहीं होता या अुसका महत्त्व नहीं घटता। बल्कि वह कल्पना और स्पष्ट होती है। और अब अुड़ीसामें अुसका प्रयोग विनोबाजीकी सीधी देखरेखमें सर्व-सेवा-संघके सेवक कर रहे हैं। अुड़ीसाके बुजुर्ग और अनुभवी लोकसेवक श्री गोपबन्धु चौधरी अुनके नेता हैं। निष्ठापूर्ण सेवाके अैसे प्रयोगको अगर 'गरीबीका बंटवारा' कहा जाय, तो पूछने जैसी बात तो यह है कि आप गरीबी कहते किसे हैं? और किनमें अुसका बंटवारा किया जा रहा है?

'गरीबीके बंटवारे' का शब्दप्रयोग अगर ग्रामसेवाको, अब बढ़नेकी अिच्छा रखनेवाले ग्रामोद्योगोंको (आज जिन बड़े यंत्रोद्योगोंकी बढ़ी-चढ़ी बातें की जाती हैं अुनकी तुलनामें) लोगोंकी नजरमें नीचे गिरानेकी दृष्टिसे किया जाता हो तो यह बड़ी गलती है। अगर ग्रामोद्योग बढ़ते हैं, ग्रामसेवाके छोटे-मोटे काम होने लगते हैं तथा भूदान द्वारा बेजमीन लोगोंको जमीन मिलती है, तो अिससे गरीबी किनमें बंटती है? यदि अैसा कहा जाय कि जमीन देनेवाला गरीब बनता है, तो वह ठीक नहीं है। जिसके पास काफी जमीन है, वही जमीन दानमें देता है। अिसलिअे दरअसल यह कहना सच होगा कि लोगोंमें समृद्धि और जायदादका बंटवारा होता है और गरीब कुछ हद तक जमीन-जायदादवाले बनते हैं।

आज सब कोअी चाहते हैं कि हमारी ग्राम जनता कपड़ा और खान-पानकी चीजें पैदा करनेके लिअे तैयार हो, बल्कि अुसे तैयार करनेके लिअे राज्य जाग्रत प्रयत्न करे; अिसके लिअे अुन्हें अच्छे और ज्यादा काम दे सकनेवाले औजार खोजकर दिये जायं; अुन्हें पैसेकी जरूरी मदद दी जाय; तथा अुनका माल खपे अिसके लिअे भावताव और बाजारोंकी व्यवस्थाका विचार किया जाय।

अब यदि अिस कारणसे बड़े यंत्रोद्योगोंको, जिनका बड़ा भाग कपड़ा और खान-पानकी चीजें पैदा करके ही विकसित हुआ है, नुकसान पहुंचे, अुन पर बुरा असर हो, तो अुस असरसे अुन्हें बचानेके लिअे तो गरीबीके झूठे नाम पर भूदानके खिलाफ आवाज नहीं अुठाअी जा रही है? सच तो यह है कि अिन यंत्रोद्योगोंको अब धीरे-धीरे क्षेत्रसंन्यास लेना चाहिये। अिसका क्रम स्वाभाविक

www.vinoba.in

ही होगा। अर्थात् जैसे-जैसे विकेन्द्रित ग्रामोद्योगोंकी नीति जोर पकड़ती जाय, वैसे-वैसे राष्ट्रके अिस क्षेत्रके यंत्रोद्योग बन्द होते जायं, वे अपनी लीला समेटते जायं। अगर हम भारतमें समानता और सबके निर्वाहके आधार पर आर्थिक स्वराज्य स्थापित करना चाहते हैं, तो अुसकी स्पष्ट प्रक्रिया अिस परिवर्तनमें ही निहित है। अिन अुद्योगोंके कृत्रिम अस्तित्वके कारण जो लोग अमीर बने हैं, अुन्हें कुछ नुकसान अुठाना या सहना पड़े, तो अिसे क्या 'गरीबीका बंटवारा' कहा जायगा? अमीर लोग अगर राष्ट्रहितके लिअे कुछ नुकसान सहें तो अुसे गरीबी नहीं कहा जायगा, वह तो अुनका त्याग है। अब श्री मेहताव जैसे नेताओंको अैसी सीख देना चाहिये, जिससे अमीर और खुशहाल लोग समझ-बूझ कर स्वेच्छासे अैसा त्याग करने लगें। अगर भूदानमें और ग्रामोद्योगोंके पुनर्गठनमें किसी चीजका बंटवारा होता है, तो वह जायदादका या समृद्धिका ही बंटवारा होता है।

यहां अिस सम्बन्धमें अेक अुदाहरण देकर अपनी बात मैं पूरी करूंगा। अभी अभी गांधीजीकी डायरी पढ़ते हुअे वह देखनेमें आया। डायरी लिखनेवाली श्री मनुबहन गांधीने ता० १८-४-'४७ की अपनी पटनाकी नोंधमें अिस तरह लिखा है:

"मैंने बापूजीसे पूछा कि आप यंत्रोंके खिलाफ हैं और ग्रामोद्योगोंके विकासकी हिमायत करते हैं। लेकिन मान लीजिये कि देशके लोग ग्रामोद्योगोंको ही अपना लें तो मद्रास, बम्बअी, कलकत्ता, दिल्ली, अहमदाबाद वगैरा शहरोंमें जो अितने कारखाने चलते हैं अुनका क्या होगा?

"बापू बोले — लोहेके यंत्रोंमें जो पैसा डाला गया है, अुसका खात्मा भी हो जाय तो मुझे दुःख नहीं होगा। सच्चा हिन्दुस्तान तो ७ लाख गांवोंमें रहता है। तू जानती है? युरोपके बड़े शहरों — लन्दन वगैराने हिन्दुस्तानको चूसा है, हिन्दुस्तानके शहरोंने अुसके गांवोंको चूसा है; अुसीसे शहरोंमें आलीशान महल खड़े हुअे हैं और गांव कंगाल हो गये हैं। मुझे तो अिन गांवोंमें नवजीवनका संचार करना है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि सारे शहरोंकी सारी मिलोंका खात्मा कर दिया जाय। लेकिन जब जागे तभी सवेरा मानकर सावधानीसे काम करना चाहिये। अब शहर गांवोंको चूसना बन्द करें और अुनके साथ जितना भी अन्याय हुआ है अुसकी बारीकीसे जांच करके गांवोंकी आर्थिक स्थिति मजबूत बनावें।"

६-१-'५६ **मगनभाई देसाई**
(गुजरातीसे)

खुलासा

ता० १२-११-'५५ के 'हरिजनसेवक' में श्री अेम० व्ही० के छपे 'खेतिहर मजदूरोंके बारेमें गिरि-कमेटीकी रिपोर्ट' नामक लेखके पहले पैरेकी दूसरी पंक्तिकी ओर कुछ पाठकोंने मेरा ध्यान खींचा है, जिसमें कहा गया है कि 'वे (खेतिहर मजदूर) हमारी कुल जनसंख्याके लगभग ७० प्रतिशत हैं।' अुन्होंने पूछा है कि लेखमें खतिहर मजदूरोंका अर्थ बेजमीन मजदूर है या अुसका अर्थ केवल खेती पर निभनेवाले लोग है। मैंने लेखकसे अिस बारेमें पूछताछ की। दूसरी बात ही सही है, यानी '१९५१ की जनगणनाके अनुसार देशकी आबादीके ७० प्रतिशत लोग अपनी जीविकाके लिअे खेती पर निर्भर करते हैं।'

६-१-'५६ **म० प्र०**
(अंग्रेजीसे)

शिक्षाके बारेमें राष्ट्रपतिके विचार

ता० २८-१२-'५५ को अखिल भारतीय शिक्षा परिषद्के तीसवें अधिवेशनका अुद्घाटन करते हुअे राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसादने कहा कि यह बड़े अफसोसकी बात है कि किसी आदमीको समाजमें अुसकी बौद्धिक सिद्धियों और सच्ची निःस्वार्थ सेवाके आधार पर नहीं, बल्कि अुसके धन-दौलतके स्थूल आधार पर स्थान और अिज्जत मिलती है। अुन्होंने यह चेतावनी दी कि "मानव मूल्योंके आग्रहमें यह परिवर्तन नाशकारी सिद्ध होगा, अगर अुसे समय रहते रोका न गया।"

देशकी मौजूदा शिक्षा-पद्धतिका जिक्र करते हुअे राष्ट्रपतिने कहा, "जहां तक मैं जानता हूं, हम अभी तक शिक्षा-पद्धतिको अिस हद तक बदलनेमें सफल नहीं हुअे हैं कि वह स्वतंत्र भारतकी जरूरतोंके अनुकूल बन सके। मैं तो यह भी कहूंगा कि हम अपनी शिक्षा-पद्धतिको नअी जरूरतोंके अनुकूल बनानेके लिअे जितना प्रयत्न किया जाना चाहिये अुतना नहीं कर सके हैं।

"हमारे देशकी मौजूदा शिक्षा-पद्धति नअी नहीं है। अगर मैं यह कहूं तो गलत नहीं होगा कि वह पिछले १२५ वर्षसे चली आ रही है। यह शिक्षा-पद्धति अेक खास ध्येयको दृष्टिमें रखकर शुरू की गअी थी। लेकिन आज वह ध्येय नहीं रहा। अब निश्चित ही हमारा वह ध्येय नहीं है। लेकिन हमारी शिक्षाका स्वरूप लगभग पहले जैसा ही आज भी है। मैं जानता हूं कि अुसे बदलनेके लिअे कुछ कदम अुठाये गये हैं। लेकिन वे हमारी आजकी जरूरतें पूरी करनेके लिअे काफी नहीं हैं।"

राष्ट्रपतिने कहा कि अन्य देशोंकी तरह हमारे देशमें भी शिक्षा-पद्धतिको तीन भागोंमें बांटा गया था। ये तीन भाग विद्यार्थीके जीवनके तीन भिन्न कालोंको बताते थे: प्राथमिक, माध्यमिक, और अुच्चतर माध्यमिक। अिन तीन अवस्थाओंका अेक-दूसरेसे संबंध होना चाहिये और अेकसे दूसरी अवस्था पर जानेमें कोअी कठिनाअी नहीं होनी चाहिये।

"अिस कारणसे अगर हम अपने देशकी शिक्षा-पद्धतिमें सुधार करना चाहते हैं, तो सुधारकी सबसे महत्त्वपूर्ण अवस्था प्राथमिक शिक्षणकी होगी। पहले हमें प्राथमिक शिक्षणका सवाल हल करना चाहिये और अुसके बाद माध्यमिक तथा अुच्चतर माध्यमिक शिक्षणका। हमें तीनों भागोंको अिस तरह जोड़ देना चाहिये कि विद्यार्थीके लिअे अेक अवस्थासे दूसरी और तीसरी अवस्था पर पहुंचनेमें कोअी कठिनाअी न हो।"

राष्ट्रपतिने आगे कहा, "अिस स्थितिके लिअे मैं किसीको दोष नहीं देना चाहता। कुछ घटनायें अैसी घटीं कि आजादीके बाद हमने सोचा कि सबसे पहले युनिवर्सिटी शिक्षाके सुधारका काम हाथमें लेना चाहिये। अिसलिअे अेक युनिवर्सिटी कमीशन कायम किया जाय। बादमें माध्यमिक शिक्षा कमीशन आया। और अब शायद प्राथमिक शिक्षाका कुछ विचार किया जा रहा है। यह बात नहीं कि जिनके हाथमें शिक्षाकी व्यवस्थाका काम है, अुन्होंने शिक्षाकी प्राथमिक अवस्थाको पूरी तरह भुला दिया है। लेकिन मेरी रायमें अगर हम सबसे पहले प्राथमिक शिक्षासे शुरू करते, बादमें माध्यमिक शिक्षा पर जाते और अन्तमें युनिवर्सिटी शिक्षणका काम हाथमें लेते तो ज्यादा अच्छा होता। अगर यह रास्ता अपनाया जाता तो आज हम शिक्षाके क्षेत्रमें जो दृश्य देखते हैं वह हमें देखनेको नहीं मिलता।"

युनिवर्सिटी शिक्षाके बारेमें राष्ट्रपतिने कहा, "जिन युवक-युवतियोंको आजकी युनिवर्सिटियोंमें पढ़नेका मौका मिलता है, वे भी जीवनका सामना करनेके लिअे अच्छी तरह तैयार नहीं होते। युनिवर्सिटीसे निकलनेके बाद न तो वे अपने गांवोंको लौट पाते और न शहरोंमें अुन्हें कोअी योग्य काम मिलता है। अुनमें से

www.vinoba.in

कुछ लोगोंको जरूर कोअी न कोअी नौकरी मिल जाती है। लेकिन युनिवर्सिटियोंसे ग्रेज्युअेट होकर निकलनेवालोंमें बहुतसे बेकार होते हैं। मैं अुनके खिलाफ कोअी शिकायत नहीं करना चाहता। अिसमें अुनका कोअी दोष नहीं है। अिन युनिवर्सिटियोंमें अुन्हें जो कुछ सिखाया जाता है, और वे जो कुछ सीखते हैं, वह अुन्हें जीवनमें कुछ ठोस काम करने लायक नहीं बनाता।"

"बेशक, युनिवर्सिटीकी शिक्षाका स्तर नीचे गिर रहा है। लेकिन अुसका कारण क्या है? अुसका मुख्य कारण यह है कि शुरुआतसे ही शिक्षाका स्तर बहुत नीचा होता है। अिसलिअे अूंची अवस्थाओंमें शिक्षाका स्तर अूंचा नहीं हो सकता। यह संभव ही नहीं है। बहुतसे विद्यार्थी कॉलेज और युनिवर्सिटी शिक्षाकी अवस्था तक पहुंच जाते हैं। लेकिन वे कॉलेज या युनिवर्सिटीकी शिक्षासे लाभ नहीं अुठा सकते, क्योंकि नीचेकी अवस्थाओंमें अूंची शिक्षाके लिअे आवश्यक योग्यता नहीं प्राप्त कर पाते।"

डॉ० प्रसादने कहा कि अुच्च शिक्षणके लिअे विद्यार्थियोंके अर्जी करने पर चुनावकी प्रणालीका अनुसरण किया जाय तो ज्यादा अच्छा होगा। मैं यह नहीं कहना चाहता कि योग्य विद्यार्थियोंको अुच्च शिक्षा लेनेसे वंचित किया जाय, लेकिन किसी तरहका चुनाव करना जरूरी है। अिससे न केवल युनिवर्सिटी अधिकारियोंका बोझ कम हो जायगा, बल्कि माता-पिताका बोझ भी कम हो जायगा, जिन्हें अपने बच्चोंको युनिवर्सिटीकी शिक्षा दिलानेमें बहुत पैसा खर्च करना पड़ता है।

अिसके बाद राष्ट्रपतिने पुराने ढंगके स्कूल-कॉलेज खोलनेके 'मोह' का जिक्र किया। अुन्होंने कहा, "मैं लोगोंके अिस अुत्साहको भंग नहीं करना चाहता। मैं चाहता हूं कि जरूरी काम अवश्य किया जाय। आजकी जरूरत स्कूल खोलनेकी नहीं, परंतु सही ढंगके स्कूल शुरू करनेकी है। स्कूल और कॉलेज अेक विशेष ध्येयको सामने रखकर खोले जाने चाहिये।"

अुन्होंने कहा कि हमें अिस मुख्य प्रश्न पर विचार करना है कि आज स्कूलों और कॉलेजोंमें जो शिक्षण दिया जाता है, अुससे देशको लाभ होता है या नहीं।

राष्ट्रपतिने आर्थिक प्रगतिका अुल्लेख करते हुअे कहा कि आजादी मिलनेके बाद भारतने आर्थिक क्षेत्रमें प्रगति की है। लेकिन वहां भी जोर चीजोंके परिग्रह-पक्ष पर या अधिक धन संग्रह करने पर ही दिया जाता है। अिस वृत्ति पर रोक लगाअी जानी चाहिये। सम्मान और पैसा समानार्थक नहीं बन जाने चाहिये। "हमें समाजके अिन मूल्योंको बदलना होगा, जहां सम्मान आदमीकी थैलीकी लम्बाअी पर निर्भर करता है।"

आगे चलकर अुन्होंने कहा, "यह आवश्यक है कि लोगोंकी स्थिति सुधरे, वे खुशहाल बनें, लेकिन धनकी प्राप्ति पर जरूरतसे ज्यादा जोर देना ठीक नहीं है। केवल पैसेके बल पर मनुष्य अूंचे नहीं अुठ सकते। वास्तवमें जीवनकी बेहतर चीजोंका और ज्यादा पैसेका यह मोह देशकी प्रगतिको रोक सकता है। हर चीजको, जिसमें मनुष्यका बड़प्पन और आदर-अिज्जत भी शामिल है, पैसेके गजसे नापनेकी यह आदत अच्छी नहीं है। लोगोंको धन-लोभके नशेमें चूर नहीं हो जाना चाहिये।"*

(अंग्रेजीसे)

* २९ दिसम्बर, १९५५ के 'नेशनल हेराल्ड' से संक्षिप्त।

सच्ची शिक्षा

लेखक : गांधीजी; अनु० रामनारायण चौधरी

कीमत २-८-० डाकखर्च १-०-०

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-१४

'केवल रोटी पर्याप्त नहीं'

अिस पत्रके पाठक श्री विल्फ्रेड वेलॉकको अुनके गंभीर विचारपूर्ण लेखोंसे जानते हैं, जो 'हरिजन' में पहले अुद्धृत किये गये हैं। अुन्होंने हालमें ही 'नॉट बाय ब्रेड अेलोन' (केवल रोटी पर्याप्त नहीं) नामक अेक पुस्तिका* प्रकाशित की है, जो अमेरिकाकी दिनोंदिन फैलती हुअी अर्थरचनाके अध्ययनका परिणाम है। वे लिखते हैं, "पिछले २८ वर्षोंमें मैंने अमेरिकामें चार लम्बे प्रवास किये हैं। अन्तिम प्रवास अभी-अभी पूरा हुआ है। और तीसरा प्रवास पांच वर्ष पहले किया था।" अुपरोक्त अध्ययन अुनके अंतिम प्रवासका परिणाम है।

१

बड़ा अुपयुक्त प्रश्न

पुस्तिका अेक बड़ा अुपयुक्त प्रश्न अुठाती है:

"कहा जाता है कि अमेरिकाकी जीवन-पद्धति आदर्श है, जिसे प्राप्त करनेकी सब देशोंको आकांक्षा रखनी चाहिये; अुसीमें साम्यवादके विस्तारको रोकनेकी दुनियाकी आशा निहित है। परंतु यदि दुनियाका हरअेक राष्ट्र अमरीकी स्वरूपकी अर्थरचनाको अपनाने चले तो अुसके कारण पृथ्वीकी साधन-सामग्रीके लिअे जो विश्वव्यापी संघर्ष होगा अुसके परिणामोंका अन्दाज कौन लगा सकता है? २० वर्षके भीतर सारी दुनिया अैसी आर्थिक तंगदिलीके दलदलमें फंस जायगी, जैसी पहले कभी जानी नहीं गअी थी। बहुतसे दूरंदेश अमेरिकन अब यह पूछने लगे हैं कि दुनिया अमेरिकाके मौजूदा जीवन-मानको कायम रखनेमें कब तक सहायक हो सकेगी?

"जो प्रश्न वास्तवमें पूछा जाना चाहिये और जिसका अुत्तर दिया जाना चाहिये वह यह है: क्या अमेरिकाकी जीवन-पद्धति मनुष्यके लिअे अच्छी जीवन-पद्धति है? क्या वह मनुष्यके आध्यात्मिक जीवनको अुसके भौतिक जीवनकी तरह ही निश्चित बनाती और अुसका पोषण करती है? क्या यह जीवन-पद्धति वह गहरा संतोष प्रदान करती है, जिसकी तुलना सारे युगोंके विचारकों और पैगंबरोंने जीवनकी पूर्णता या सफलताके साथ की है? क्या वह मैत्रीभाव, पड़ोसीधर्मकी भावना, सहकारी प्रवृत्ति और सामान्य सद्भावनाको बढ़ाती है? या वह स्वार्थ, भोग-विलास, अुड़ाअूपन, बरबादी, मुनाफाखोरी और बहुतायतकी बुराअियोंको प्रोत्साहन देती है?

"मनुष्य केवल रोटीके बल पर नहीं जीता। और जब मानव अनुभवके सूक्ष्म मूल्योंका विचार किया जाता है, तो अधिकतर युरोपीय प्रजाओं, बड़ी संख्यामें अंग्रेजों और पश्चिम युरोपके लोगों तथा काफी अमेरिकन लोगोंको भी यह लगता है कि अमरीकी जीवनका ताजेसे ताजा झुकाव अतिशय भौतिकवादी है और अुसका वेग अितना तेज और थकानेवाला है कि अुसमें दम मारनेका भी समय नहीं मिलता। अनेक शान्त और परिचित मूल्य, जो जीवनके आधार हैं, नष्ट हो रहे हैं। अगर आज पूर्वकी महत्त्वपूर्ण जरूरतें भौतिक हैं तो पश्चिमकी महत्त्वपूर्ण जरूरतें आध्यात्मिक हैं।

"अिसलिअे अमेरिकाकी जीवन-पद्धति और विश्वकी राजनीतिमें वह जो पार्ट अदा कर रहा है, अिन दोनोंके संबंधका विचार करना महत्त्वपूर्ण बन जाता है, क्योंकि वह साम्यवादके, रूसके और दिनोंदिन बढ़ रहे चीनके भारी डर पर निर्भर करता है।"

* भारतमें यह पुस्तिका सर्वोदय प्रचुरालयम्, तंजोर (द० भारत) से प्राप्त की जा सकती है। कीमत ०-४-०; डा० खर्च ०-२-०।

www.vinoba.in

२

अमरीकी अर्थरचना और जीवन-पद्धति

अमरीकी अर्थरचना और जीवन-पद्धति क्या है? अुसका क्या स्वरूप है? क्या वह हमारी बुराअियोंको दूर करनेके लिअे अेक विश्वसूत्रकी तरह दुनियाके सारे राष्ट्रों द्वारा अपनाअी जा सकती है? लेखक अिस प्रश्नकी विस्तारसे चर्चा करते हुअे कहते हैं:

"आज अमरीकी जीवनका मूलमंत्र विस्तार और विकास है। अमेरिकाकी नअीसे नअी विजय अुसकी फैलनेवाली अर्थरचना है। वह अिस तरह काम करती है। जैसे-जैसे मशीनें बढ़ती हुअी मात्रामें अपने-आप काम करनेवाली या विशिष्ट काम करनेवाली बनती जाती हैं, वैसे-वैसे अधिकाधिक मजदूर बेकार होते जाते हैं। अिन मजदूरोंको फिरसे कामधंधा देनेके लिअे नअी नअी मशीनोंका आविष्कार किया जाता है और अुन्हें बनानेके लिअे नये अुद्योग खोले जाते हैं। अिसके बाद नअी मशीनोंकी खरीदको बड़े पैमाने पर निश्चित बनानेके लिअे विज्ञापन अेजेंसियां खड़ी की जाती हैं, साथ ही साथ बीमा-कंपनियां हरअेकके लिअे नअी मशीनें किस्त पर पैसा चुकानेकी शर्त पर खरीदना संभव बनाती हैं। अगर कभी आवश्यक नअी मशीनोंका आविष्कार न हो सके तो बीचके समयमें सरकार सड़कों, मकानों वगैरा पर खर्चा करके लोगोंको काम देती है।

"सैद्धान्तिक दृष्टिसे अिस ढंग पर औद्योगिक विस्तार बढ़ानेकी कोअी सीमा ही नहीं है, क्योंकि जरूरतोंके बढ़नेकी भी कोअी सीमा नहीं है — बशर्ते जीवन-पद्धति अिस प्रकारकी हो जो अधिकसे अधिक वस्तुओंके अुपभोग, सेवाओं और निरन्तर बढ़नेवाले भौतिक जीवन-मानकी आशा दिलाती और मांग करती है।

"फैलनेवाली अर्थरचनाकी अिस प्रक्रियामें मुख्य चिन्ता सारे अुपलब्ध श्रम और पूंजीको लाभदायक ढंगसे काममें लगाये रखनेकी होती है, क्योंकि अिसी तरीकेसे समृद्धि और खुशहालीको निश्चित बनाया जा सकता है। लेकिन अगर अिस अर्थरचनाको अपने अुद्देश्यमें सफल होना है, तो अिस प्रक्रियामें कहीं कोअी शिथिलता नहीं आनी चाहिये। जैसे-जैसे मशीनें अधिकाधिक मात्रामें अपने-आप चलनेवाली बनती जायं, वैसे-वैसे नअी मशीनें आनी चाहिये और बननेके बाद बिकनी चाहिये। यह काम विज्ञापन-निष्णातोंको सौंपा जाता है, जो समाचारपत्रों (खास करके बड़े बड़े रविवार-संस्करणों), सैकड़ों तड़कभड़कसे निकलनेवाले मेगज़ीनों, रेडियो और टेलि-वीज़नको यह काम सौंप देते हैं। अिन सब साधनोंके जरिये अमेरिकन जनताके दिमागमें निरन्तर निर्दयतापूर्वक नअी मशी-नोंकी अच्छाअियोंको तब तक ठूंसा जाता है, जब तक कि अुनकी सार्वत्रिक स्वीकृतिका लक्ष्य सिद्ध नहीं हो जाता। विज्ञापन-निष्णातोंका काम खुरदा व्यापारियों और बीमा-कंपनियों द्वारा पूरा किया जाता है, जो मालका प्रदर्शन करते हैं और तुरन्त अुसे अैसी शर्तों पर — जिन्हें आसान कहा जाता है लेकिन दरअसल जो लोगोंके भविष्यको ही बुरी तरह गिरो रख लेती हैं — अुस जनता तक पहुंचाते हैं, जिसे सारी अच्छी चीजोंमें हिस्सा लेनेके अपने अधिकारमें विश्वास रखनेकी तालीम दी जाती है।

"अिन साधनोंसे लोगोंमें जीवनके प्रति अेक विशिष्ट मनोवृत्ति या रुख पैदा किया जाता है। औसत अमेरिकन अब यह विचार करता है कि अगर कोअी मेहनत बचानेवाली मशीन निकले तो अुसे खरीदनेके लिअे वर्षों तक पैसा बचाकर ज्यादा बड़ी अुमरमें खरीदनेके बजाय युवावस्थामें खरीदकर किस्तसे अुसकी कीमत चुकाना कहीं अच्छा है।

"फैलनेवाली अर्थरचनाके अिस जादुअी चक्रमें क्या क्या समाया हुआ है? अमरीकी मशीनें बहुत महंगी होती हैं, क्योंकि विज्ञापन और बीमेकी सारी कीमत अुनकी कीमतोंके साथ जोड़नी होती है। और विज्ञापनबाजी आज अमेरिकाका अेक बड़ा अुद्योग है। अिसके सिवा, अेक या दो मशीनें खरीदना अेक बात है, और सात-आठ मशीनें खरीदना तथा मकान गिरो रखकर मोटर खरीदना और बीमेकी अनेक पालिसियां कराना बिलकुल दूसरी बात है। अिसलिअे निचले मध्यम वर्गों और अकसर अूंचे मध्यम वर्गोंके अधिकांश लोगोंको हर मशीन किस्त पर ही खरीदनी पड़ती है।"

३

अमरीकी परिवारका बजट

अमेरिकाकी वर्तमान अर्थरचनाका साधारण स्वरूप वर्णन करनेके बाद लेखक औसत परिवारका बजट अिस प्रकार बताते हैं:

"अमरीकी समाज विशाल मध्यमवर्गका माना जा सकता है, जिसके अेक सिरे पर छोटा गरीब वर्ग है, और दूसरे सिरे पर बहुत ही छोटा धनी वर्ग है। समाजके अिस बीचके स्तरमें काफी बड़े कारीगर वर्गका, सब तरहकी दस्तकारियां बनानेवाले लोगोंका समावेश होता है। हम अुनकी मांगोंका परीक्षण करेंगे और अपनी जांचको अुन्हीं परिवारों तक सीमित रखेंगे, जिनकी वार्षिक आय ३,५०० से ६,००० डालर तक है — यह वर्ग शायद अमरीकी प्रजाका सबसे बड़ा वर्ग है।"

अिस आयकी तुलनामें मकान, मशीनों, छुट्टियां और शिक्षण, मोटर, बीमारी वगैराके खर्चका हिसाब लगाया जाय तो हम देखेंगे कि:

"अिन सब बातोंमें ८० से १२० डालरकी साप्ताहिक आयवाले परिवारोंकी आधीसे ज्यादा आय खर्च हो जाती है, और परिवारके भोजन, कपड़े, घर-गृहस्थीकी चीजों, प्रकाश और गर्मी, अखबारों, पुस्तकों, सामयिक पत्रों, मनोरंजन, चर्च, क्लब, जीवन-बीमा वगैराके लिअे प्रति सप्ताह ३० से ६० डालरसे अधिक पैसा नहीं बचता। अमरीकी पद्धतिकी घरेलू अर्थ-व्यवस्थामें पतिका जीवन-बीमा आवश्यक चीज हो जाता है, जिसमें परिवारका खर्च आयके साथ साथ चलता है, और अक्सर आमदनीसे बढ़ जाता है।

"घरकी व्यवस्थाके लिअे ४० या ५० डालरका खर्च अंग्रेज परिवारको बहुत बड़ा लगेगा, लेकिन अमरीकी परिवारको नहीं लगेगा जो अपना पैसा दूसरे ढंगसे खर्च करता है। अमरीकी गृहिणी अधिकाधिक मात्रामें जमा कर डिब्बोंमें बन्द किये हुअे तैयार खाद्य पदार्थ खरीदती है; वे समय तो बचाते हैं, लेकिन ज्यादा महंगे होते हैं। और अुनमें जो रासायनिक पदार्थ मिलाये जाते हैं, वे स्वास्थ्यके लिअे बहुत नुकसानदेह होते हैं।"

और अुन परिवारोंका क्या हाल है जो अिससे अधिक आयवाले हैं — बहुत ज्यादा खुशहाल हैं? अुनके विषयमें लेखक कहते हैं:

"यह आश्चर्यजनक लग सकता है कि अूंची आय-वालोंकी भी लगभग यही स्थिति है। अुनके सारे खर्च, जिनमें टेक्स भी शामिल हैं, तुलनामें अधिक अूंचे हैं। वे ज्यादा अच्छे मकानोंमें रहते हैं, ज्यादा महंगे कपड़े पहते हैं, ज्यादा अच्छी मोटरें रखते हैं और अपने बच्चोंको ज्यादा महंगे कॉलिजोंमें भेजते हैं।

"मुसीबतके दिनोंके लिअे या बुढ़ापेके लिअे पैसा बचानेकी आदत अितिहासकी पुस्तकोंको सौंप दी गअी है। अिस हकीकतने कि अमेरिकाकी आबादी लगातार बढ़ती जा रही है, बढ़नेवाली मांगोंको भी निश्चित बना दिया है।

www.vinoba.in

१९५३ में अमेरिकाकी जन्मसंख्या प्रति हजार २४.७ थी। यह लगभग अुतनी ही अूंची है, जितनी कि भारतकी; अिसके विपरीत ब्रिटेनकी जन्मसंख्या प्रति हजार १५.४ है।"

४

अमरीकी लोगोंके मन पर असर

अमेरिकाकी फैलती हुअी अर्थरचनाकी चर्चा करनेके बाद श्री वेलॉक यह वर्णन करते हैं कि अिस अर्थरचनाका अमरीकी मानस पर कैसा असर पड़ता है:

"यह चीज अमरीकी प्रजाकी आध्यात्मिक दशाको अपार हानि पहुंचा रही है। चूंकि किस्तसे चुकानेकी शर्त पर अुधार माल देनेकी पद्धति प्राप्त होते ही लगभग सारी आयको हजम कर जाती है, अिसलिअे भौतिक जीवनका अपेक्षाकृत अूंचा मान होते हुअे भी अमेरिकाके लोगोंके पास नकद पैसेका हमेशा अभाव होता है और अुन्हें भारी कर्जसे लदे होनेका सदा भान रहता है। ये दो हकीकतें अुनके मनको दुनियवी चीजोंकी तरफ खींचती हैं और अुसे जबरन् भौतिकवादी दृष्टिकोणवाला तथा चिन्तापूर्ण बना देती हैं।

"चूंकि लोगोंकी परिस्थितियां अुन्हें सदा आमदनी बढ़ानेके बारेमें सोचनेको मजबूर करती हैं, अिसलिअे अुनकी आध्यात्मिक दिलचस्पी और प्रतीति मन्द पड़ जाती है, मन और आत्माका गुण घट जाता है और परिवारकी आध्यात्मिक भावनाको हानि पहुंचती है। लोग सार्वजनिक कार्योंमें दिनोंदिन कम रस लेते हैं। अिसका परिणाम यह होता है कि सरकारकी टीका कम हो जाती है, जो संकटके समय खतरनाक साबित हो सकता है।

"अिस गिरी हुअी मानसिक और आध्यात्मिक अवस्थाके साथ लोगोंका मन हमेशा अिस हद तक भयग्रस्त रहता है कि वे अुसे प्रगट किये बिना नहीं रह सकते: 'अगर परिवारमें जन्म, मृत्यु या बीमारी आअी या व्यापारमें मंदी आअी तो हम क्या करेंगे? अगर बेकारी हो गअी तो हमारी गिरो रखी हुअी चीजों, बीमों और किस्तसे पैसा चुकानेकी शर्त पर खरीदी हुअी हमारी मशीनोंका क्या होगा?'"

लेखक अिस निर्णय पर पहुंचते हैं कि "अमरीकी जीवन-पद्धति भौतिकवादकी राक्षसी बन बैठी है", और कहते हैं कि "ब्रिटेन भी अमेरिकाके रास्ते पर चल रहा है और अुसे भी अुन्हीं समस्याओंका सामना करना पड़ेगा।" हम भी अिससे समय रहते चेत सकते हैं, क्योंकि भारतमें हम भी — खास करके बड़े औद्योगिक शहरोंमें हमारा मध्यमवर्ग अुसी चिकने और फिसलानेवाले रास्ते पर चल रहा है।

५

तब हमें क्या करना चाहिये?

अैसी स्थितिमें हमें क्या करना चाहिये? श्री वेलॉक अिस प्रश्नकी भी चर्चा करते हैं और कहते हैं:

"अिस तरह आधुनिक समस्या बहुत बड़ी हद तक आध्यात्मिक दिवालियेपनकी है, जिसे पूंजीवाद, समाजवाद या साम्यवाद अभी तक हल नहीं कर पाया है। आजकल कअी साम्यवादी देश अपनी कृषि-संबंधी नीतियोंकी नये सिरेसे रचना कर रहे हैं, क्योंकि वहांके किसान फौजी ढंगकी व्यवस्था और बुनियादी सामाजिक संबन्धोंके अभावकी स्थितिके खिलाफ विद्रोह कर रहे हैं। अुन्हें यह पता चल रहा है कि जब परिश्रममें किसानकी आत्मा नहीं रह जाती, तब वह लाभदायक नहीं रहता और कभी न हल होनेवाली आर्थिक समस्या बन जाता है। और पश्चिमके लोगोंको यह मालूम होने लगा है कि कामका मूल्य केवल पैसेमें आंकनेका परिणाम शिथिलता, गैरहाजिरी, अनधिकृत हड़तालों, निरन्तर असंतोष और अशांतिमें आता है।

"जो देश अिस मुख्य मानवीय और सामाजिक समस्याको हल कर लेगा, अुसे साम्यवाद और लोकतंत्रकी जिच मिटानेकी कुंजी मिल जायगी। जब हम लोगोंसे पशुओंकी तरह काम करानेका प्रयत्न छोड़ देंगे और सर्जक समाजमें सर्जनात्मक कार्य द्वारा संपूर्ण मानवोंका विकास करनेका ध्येय रखेंगे, तब हमें सामाजिक और आन्तर-राष्ट्रीय शांतिका मार्ग मिल जायगा।

"धनवान बननेकी स्वतंत्रताकी अपेक्षा संपूर्ण व्यक्ति बननेकी स्वतंत्रताका कहीं बड़ा महत्त्व है। दुनियाकी जितनी भी सभ्यतायें लिखित अितिहासमें अपने चिन्ह छोड़ गअी हैं, अुनकी महत्ताका रहस्य धरतीको अुपजाअू बनाने तथा अुपयोगी और सुन्दर अिमारतें खड़ी करनेसे लेकर चित्र बनाने, काव्य रचने और संगीत तककी जीवनकी सर्जनात्मक प्रवृत्तियोंमें ही निहित रहा है; और अुस महत्ताका आधार मानवकी पूर्णता पर और प्राणवान समाजमें पड़ोसीधर्मकी भावनासे प्रेरित होकर किये जानेवाले कार्यों पर रहा है। अिसके विपरीत, सारी औद्योगिक क्रान्तिके दरमियान अपने-आप चलनेवाले यंत्रोंकी प्रगतिकी हर मंजिल पर यंत्रका दर्जा बढ़ा है और मानवका दर्जा तथा अुसके जीवनका गुण घटा है।

"अब अिस प्रक्रियाको बदलनेका और गुणपूजक सभ्यताकी ओर जानेका समय आ गया है। जहां वांछनीय मालूम हो वहां अपने-आप चलनेवाले यंत्रोंका स्थान हाथ-कारीगरी और अैसे छोटे वर्कशापोंको दिया जाना चाहिये, जो आसानीसे बंट सकनेवाली शक्तिके नये रूपोंके मातहत चलनेवाली यांत्रिक कार्यपद्धतियोंकी मददसे काम करें। अिससे अधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्तिगत और सामाजिक जीवनका निर्माण होगा। सर्जक कार्यका विस्तार करनेके लिअे अपने-आप चलनेवाले यंत्रोंकी फैक्टरियोंको थोड़े समयके लिअे या तीसरे दिन चलाना चाहिये। मजदूरोंको अपना कुछ समय अूंची जातिकी विशेष कलात्मक चीजें बनानेमें खर्च करना चाहिये। अिससे सब प्रकारके छोटे, सहकारी या सामूहिक व्यवसाय संभव होंगे।

"अिस तरहकी रचनाकी आवश्यक तैयारीके रूपमें नअी संस्कृतिकी जरूरत होगी। स्कूलों और कॉलेजोंमें विद्यार्थियों और अध्यापकोंको जीवनकी कलाका, भौतिक और आध्यात्मिक विषयोंके तुलनात्मक मूल्योंका तथा अच्छे जीवनसे संबंधित सारी बातोंका अध्ययन करना चाहिये।"

यह वही चीज है जिसे हम भारतमें आम तौर पर सर्वोदयी जीवन-पद्धति कहते हैं। हम अुसे अपना कर न केवल अपनी रक्षा करेंगे, बल्कि सारी दुनियाकी रक्षा करेंगे। अैसा करके ही भारत अपनी स्वतंत्रताको अुचित ठहरा सकता है, जिसे हमने सारे विश्वकी सेवाके लिअे प्राप्त किया है।

२६-१०-'५५ **मगनभाई देसाई**
(अंग्रेजीसे)

विषय-सूची

		पृष्ठ
गुजरातकी नअी जिम्मेदारी	मगनभाई देसाई	३६१
रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा अेकता	जे० बी० कृपालानी	३६३
क्या हम पर अर्थशास्त्री राज करते हैं?	मगनभाई देसाई	३६३
अूनका अुद्योग	वि०	३६३
भूदान, सर्वोदय और गरीबी	मगनभाई देसाई	३६४
शिक्षाके बारेमें राष्ट्रपतिके विचार		३६५
'केवल रोटी पर्याप्त नहीं'	मगनभाई देसाई	३६६
टिप्पणी:		
खुलासा	म० प्र०	३६५

www.vinoba.in